उम्मीद, साहस व संघर्ष की आवाज फ़ैज अहमद फ़ैज

शिव कैलाश यादव

शोधसार:

लोकतंत्र में एक प्रश्न हमेशा बना रहता है कि जनता के साथ कौन है। जनता के साथ खड़ा कौन है। लोकतंत्र में जनता की आवाज को कौन बुलंद कर रहा है। लोकतंत्र में यह बड़ा प्रश्न रहा है। किसी भी कालखंड का साहित्य हो वह हमेशा सामान्यजन की पक्षधरता करता रहा है। सामान्यजन की चेतना को जगाता रहा है, उसकी आवाज बनकर गूँजता रहा है।उन्ही गूँजती हुई आवाजों में से एक आवाज फैज अहमद फैज की है। जिसकी गूंज, जिसकी ललकार इतनी तेज है कि शासनसत्ता के कान खड़े हो जाते है। और इसके साथ तरह–तरह के सवाल उठते है। उन्ही सवालों से कुछ महत्त्वपूर्ण सवाल है आजादी के साथ व उसके बाद उठते है। इन्ही सवालों को फैज साहब कैसे देखते है, कैसे उनसे संघर्ष करते है यही लेख का मुख्य प्रतिपाद्य है।

शोध विश्लेषणः

उम्मीदीं– कहते है की दुनियाँ उम्मीदी पर कायम है। जंगे आजादी हो या उसके बाद के हालातों से लड़ना वह बिना उम्मीदीं के संभव नहीं था। फ़ैज के अंदर यह उम्मीदीं बड़ी गहरी व गढ़ी है। और यह उम्मीदीं फ़ैज के समय व फ़ैज के लिए एक अस्त्र है। जिसके माध्यम से वे अपने समय की विषमताओं से लड़ते है। यह उम्मीदीं ही उनका हौसला बढ़ती है। अंधेरे में उजास की किरण उसमें ही दिखाई पड़ती है। और विश्वास करते है कि अंधेरा कितना ही घना या गहरा क्यों न हो पर छटेगा जरूर, यह कवि/शायर का अपना विश्वास है। और इसी विश्वास के साथ वे कहते है–

"कहीं तो होगा शब–ए–सुस्त मौज का साहिल।

कहीं तो जा के रुकेगा सफ़ीना–ए–गम–ए–दिल ।।" 1

किसी चुनौती को इस तरह स्वीकारना, और उम्मीद करना यह हर किसी के द्वारा संभव नहीं है। विषमताओं की चुनौती को इस तरह से स्वीकारते हुए समता के आश्वस्ति के लिए इस तरह से कहना अपने आप में एक विश्वास है। और विश्वास के लिए इससे बेहतर नहीं कहा जा सकता।

उर्दू भाषा व साहित्य खुद किस्मत है कि उसने सामाजिक जीवन के हर अहम मोड़ पर ऐसे गुणी पैदा किए जो अपने युग की पहचान और समय की आत्मा के शिल्पी साबित हुए। मीर, गालिब, नजीर, इकबाल, महमूद दरवेश, कैफ़ी आदि सभी ने उर्दू की ऐतिहासिक सेवा की। इन्हीं कतारों में से फैंज अहमद फैंज भी आते

है जो वर्तमान समय, समाज में दुखी मानवता की अंतरात्मा की आवाज थे। ऐसी आवाज जो गीत भी है, और ललकार भी। जिसमे विश्वास का ताप भी है और संसार के दुख का दर्द भी और प्रेम–सौन्दर्य का मीठा स्वर भी।

फैज ने अपने जीवन में बहुत सारे काम किए यदि उन्होंने सिर्फ कविताएं लिखी होती तो उनका जीवन वैसा दुखमय न होता जैसा की हमें दिखाई पड़ता है। वे लगातार कुछ वर्षों के अंतर से पाकिस्तान की जेलों में रहे, उनकी सक्रियता के कारण उन्हे कई बार मुल्क छोड़ना पड़ा और मुल्क के भीतर की जो अव्यवस्थाएं थी उनकी वजह से वे खुद कई बार बाहर गये। उन्होंने बहुत तरह के काम किए कविताएं लिखी, गद्य लिखा, शिक्षक रहे, पत्रकार रहे, अखबार के संपादक रहे, फौज में गए इसके साथ उन्होंने अलग–अलग मौकों पर पाकिस्तान हुकूमत के साथ काम किया और बाद में वेरुदा में जा कर लोटस पत्रिका में भी काम किया। इस तरह फैज के जीवन व उनकी कविताओं से गुजरते हुए जो सबसे पहली व बुनियादी बात दिखाई पड़ती है कि हमें अपने जीवन को सिर्फ लिखने–पढ़ने के काम तक सीमित नहीं रखना चाहिए। और जीतने तरह के काम संभव है आम आदमी की जिंदगी के बदलाव के लिए, आम आदमी के बेहतरी के लिए, आम आदमी के बेहतर भविष्य के लिए वे सारे के सारे काम किए जाने चाहिए।

अपने समय व समाज को एक व्यक्ति के रूप में जैसा हम देखते व पाते है, उसे खुले तौर पर साहस के साथ, ईमानदारी व प्रतिबद्धता से व्यक्त करना फैज की अपनी प्रतिबद्धता है। फैज की कविता/शायरी की जो पहली व बुनियादी खूबी समझ में आती है वह है– सच्चाई के प्रति, यथार्थ के प्रति निष्ठा, ईमानदारी और प्रतिबद्धता है। प्रतिबद्धता भी हो, ईमानदारी भी हो और साहस न हो तो बहुत सारी बातें कहीं नहीं जा सकती। फैज साहब को याद करते हुए इस साहस को याद करना बहुत जरूरी है। बिना साहस के फैज साहब पूरे नहीं होते। और इसी साहस के चलते वे लगातार शासन सत्ता से टकराते रहे और सलाखों की यात्राएं करते रहे पर साहस के साथ यथार्थ व सच्चाई को वे लिखते रहे। फैज के अंदर यदि वह साहस न होता तो शायद वह सब वे न कह पाते जो बात उन्होंने अपनी कविताओं में बेवकी के साथ की है। सुब्ह–ए–आजादी काव्य संग्रह में लिखते है कि,

"ये दाग–दाग उजाला, ये सब गजीदा सहर।

वो इंतिजार था जिसका, ये वो सहर तो नहीं।।" 2

यह बात वे आजादी की पहली सुबह में करते है। जब वे देखते है कि जिस आजादी का हमें इंतजार था, यह वह नहीं है। यह वह आजादी नहीं है जिसके खिलाफ हम लगभग एक शताब्दी वर्ष तक संघर्ष करने के बाद मिली। क्योंकि मिली हुई आजादी के साथ विभाजन, उसका दंश, उसकी त्रासदी जनता पर थोप दी गई

थी। लाद दिया गया था। यह सब उस आजादी का हिस्सा नहीं था या की आजादी की लड़ाई के गर्भ में यह सब नहीं था। जो आजादी के बाद देश की जनता को मिल। यह सब ब्रिटिश हुकूमत की कुटिल नीति व कुछ हिन्दुस्तानी राजनेताओं की ना समझी के चलते पैदा हुई एक त्रासदी है। असहमतियों, वैचारिक टकराहटों, धार्मिक वैमनष्य व गलत बयानाबाजियों के चलते यह सब संभव हुआ। जो लोगों को झकझोर कर रख देता है। जो लोगों को तोड़कर रख देता है। किसी की सहृदय विचारक लेखक कवि के लिए यह सब देखना अपने आप में एक यातना थी। फैज साहब इस यातना को लिखते है। यह सब देखना और उसे बर्दस्त करना अपने आप में एक मौत थी। और फैज साहब के पीड़ा की जो गहराई है। जो तड़प है। वह आजाद होते मुल्क को देखकर है। क्योंकि आजादी की जो सुबह है। रोशनी है। वह दाग–दाग है। उजालों की यह चादर दाग धब्बों से भरी है। और यह एक ऐसी सुबह है जिसे रात ने डस लिया है। यह पूरा का पूरा बिम्ब, पूरी कहानी, पूरी सच्चाई कह देता है कि, उजाला तो है लेकिन पूरा अंधेरे के दाग धब्बों से भरा है। कितना प्यारा कहता है यह प्यारा कवि इससे प्यारा तो नहीं कहा जा सकता है। यह दर्द का स्वर हिन्दू उर्दू दोनों में समान रूप से प्रतिध्वनित हो रहा है। धूमिल पटकथा में कहते है कि–

"इस तरह जो था उसे मैंने,

जी भरकर प्यार किया

और जो नहीं था,

उसका इंतजार किया।

मैंने इंतजार किया–

अब कोई बच्चा भूखा रहकर स्कूल नहीं जायेगा,

अब कोई छत बारिश में नहीं टपकेगी।।" 3

यह आजादी का वही इंतजार है जिसका फैज साहब ने किया और जनकवि धूमिल ने किया और देश की जनता ने किया।

फैज का जो साहस है, संघर्षशीलता है, वह अद्भुत है। उनकी एक दूसरी नज़्म है जिसमें वे कहते है–

"नजात–ए–दीद ओ दिल की घड़ी नहीं आई।

चले चलो कि वो मंजिल अभी नहीं आई।।" 4

यह एक कवि का, शायर का अपने समय व समाज की धड़कन, उसकी नब्ज को पकड़कर उसे अहवाहन करते हुए शायर की पुकार है कि चले चलो वो मंजिल अभी नहीं आई जिसकी तुम्हें प्रतीक्षा थी। प्रोटेस्ट के लिए फैज साहब की शायरी एक सम्मा है। जो हमेशा जलती रहेगी। उन तमाम लोगों के लिए भी जो आज के दौर में फ़ासिज़्म के खिलाफ खड़े है। फैज के अलावा उन्हे कौन याद आएगा। एक दूसरी नज़्म है उनकी जो सोते हुए जमीरों को भी जगा देती है। वे कहते है कि–

"बोल की लब आजाद है तेरे

बोल जबाँ अब तक है तेरी।

तेरा सुतवाँ जिस्म है तेरा,

बोल कि जां अब तक तेरी है।।" 5

ये ऐसी पंक्तियाँ है जो नई ऊर्जा का संचार करती है। शक्ति का अक्षय केंद्र है ये पक्तियाँ।

फैज साहब जिस शिद्दत से आजादी के पहले लिखते है, उतनी ही शिद्दत से आजादी के बाद लोकतंत्र की बदहाली व आम आवाम की बदहाली पर लिखते है। विकलांग लोकतंत्र जिसे अपने ही आम आवाम की जिम्मेवारी नहीं रही तब फैज सत्ता व सत्ताधीशों को चुनौती के स्वर में कहते है–

"निसार मैं तेरी गलियों पे ऐ वतन कि जहां।

चली है रस्म की कोई न सर उठाके चले।।

जो कोई चाहने वाला तवाफ को निकले।

नजर चुरा के चले जिस्मों– जां बचा के चले।।" 6

फैज ऐसे शायर है। जो यथार्थ को, सच्चाई को कहते हुए कविता से कोई समझौता नहीं करते। शायद ही उनकी कविता में आपको कभी कोई ऐसी जगह दिखाई दे, जहां यथार्थ का वर्णन, चित्रण, या जो कहन है उनका, जो बात है उनकी ओ ओझल हुई हो। यदि एक तरफ उनका सरोकार यथार्थ से, सच्चाई से, वास्तविकता से, मनुष्य के जीवन की घुटन, परेशानियों, तनावों, दुखों, शिशकियों उसकी उम्मीदी उसके सपनों से था तो दूसरी तरफ उन्होंने कविता को हमेशा अपना सरोकार बनाए रखा।

फैज अपने आप को कभी सीमाओं में बाधकर नहीं रखा। वे सीमाओं में कभी बधे ही नहीं। उन्हे सीमाएं स्वीकार नहीं थी। वे मनुष्यता के पक्षधर कवि/शायर है। उनकी सीमाएं मनुष्यता की सीमाएं है। किसी राष्ट्र राज्य की सीमाएं उनकी सीमाएं नहीं है। वे सभ्यता के शायर है। इसलिए वे किसी नेशन की चौहद्दी में बधने

वाले नहीं थे। वे किसी राष्ट्र की चौहद्दी को स्वीकार नहीं करते है। वे इस पूरे उपमहाद्वीप के कवि है। यही कारण है कि, फैज की शायरी इस पूरे उपमहाद्वीप की सभ्यता के इतिहास, उसके जन–जीवन की नब्ज को पकड़कर चलने वाली है। और जो उनका अनुभव है, समझ है। वह दुनियाँ भर में चलने वाले हक, जमहूरियत और बराबरी के संघर्ष को भीतर से महसूस करते है। और उनके साथ होने में मदद करते है। इन संघर्षों की रह में बाधाएं बहुत है। यह किसी के लिए आसान नहीं था। यही कारण है कि फैज की शायरी में घिसाव–पिटाव की लंबी चलने वाली लड़ाइयों में आने वाली उदासी, ना उम्मीदी के आरोह–अवरोह में झूलती जन–चेतना, छोटी–छोटी चीजों में अछोर खुशियों में डूब जाने की फितरत इन सबसे उनकी शायरी बहुत वाकिफ़ है। इसलिए उनकी शायरी जश्न भी मानएं और मातम भी। अवसाद से ग्रस्त भी हुई लेकिन उम्मीदी का दामन नहीं छोड़ा। कभी उसने ढाढ़स बधाया, कभी हिम्मत व होश को ललकार, कभी आँसू बहाये, कभी पुचकार, कभी दुआ में हाथ उठाए, तो कभी इंतजार की लंबी घड़ियाँ काटी, कभी तख्तोंताज गिराएं, कभी रुककर अवलोकन किया, तो कभी बेअंत सी लगाने वाली तन्हाई, मुहब्बत की गहरायों में डूबकर हसने के समान जुटायें। ऐसा फैज ही कर सकते है। फैज की क्रांतिकारी नज़्में जनता व शक्ति संपन्नों के बीच, निर्बल व शक्तिशालियों के बीच, शोषक व शोषितों के बीच, जनता की आवाज बनाकर उभरी। दुनियाँ में कहीं भी लड़ रहें हो तो इनकी नज़्म आपकी आवाज बन सकती है। आपकी साथी बन जाएगी। तब यह नज़्म सत्ता के हुक्मरानों के कानों में काटें की तरह चुभती है। जब वह पढ़ी जाती है कि–

हम देखेगें

“लाजिम है कि हम भी देखेगें

ओ दिन की जिसका वादा है।

जो लोह–ए–अजत में लिखा है,

जब जुल्म ओ सितम के कोहे–ए–गरां

रुई की तरह उड़ जायेगें।

हम महाकूमों के पाव तले

ये धरती धड़–धड़ धड़केगी।” 7

फैज अहमद फैज साहब की शायरी में इतने आवाम, इतने रंग है कि उनसे हर कोई जुड़ जाता है और वे हर किसी के पास तक पहुँच जाते है। हर किसी को वे स्पर्श करते है। बल्कि स्पर्श ही नहीं करते एक सक्रिय

चेतन का निर्माण भी करते है। जागरूक करते है। आँखों की पट्टी व कानों मे जमी धूल को वे साफ भी करते है। यह किसी कवि शायर की बहुत बड़ी सफलता है। बड़े होकर सरल व सहज होना ही फैज होना है।

संदर्भ ग्रंथ:

1. सुब्ह–ए–आजादी कविताकोश
2. सुब्ह–ए–आजादी कविताकोश
3. पटकथा कविताकोश
4. सुब्ह–ए–आजादी कविताकोश
5. बोल की लब आजाद है तेरे कविताकोश
6. निसार मैं तेरी गलियों के ए वतन रेख्ता कविताकोश
7. हम देखेंगे कविताकोश

शिव कैलाश यादव, संप्रति: शोधार्थी, हिन्दी विभाग, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा, गुजरात,